Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

उत्तरसीताचरितम् महाकाव्य में वर्णित भारतीय संस्कृति

अनामिका देवी
शोधच्छात्रा संस्कृत
शा0के0आर0जी0पी0जी0
महाविद्यालय, ग्वालियर (म0प्र0) भारत।

Article Info
Volume 3, Issue 6
Page Number: 12-16
Publication Issue :
November-December-2020

Article History
Accepted : 01 Nov 2020
Published : 28 Nov 2020

ABSTRACT

सारांश– उत्तरसीताचरितम् महाकाव्य में प्रयुक्त सभी पात्रों के क्रिया कलाप भारतीय संस्कृति के आधार है। यह भारतीयों के जीवन और संस्कृति के आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते है। संस्कृति व्यक्तिगत सम्पत्ति न होकर समाज या राष्ट्र की निधि है। विश्व का हित, विश्व की उन्नति का मूल संस्कृति है जिससे सभी प्रकार से राष्ट्र और विश्व की समुन्नति आश्रित है। भारतीय संस्कृति का वैशिष्ट्य, धर्मप्राधान्य आध्यात्मिकी और पारलौकिक भावना सदाचार पालन, वर्णव्यवस्था और आश्रम व्यवस्था कर्मवाद व पुनर्जन्मवाद, मोक्ष, श्रुतिप्रमाण, यज्ञ महत्व, सत्यपरिपालन, अहिंसापालन, त्याग, तपोमयजीवन और मातृपितृ गुरूभक्ति आदि में राष्ट्र और विश्व की समुन्नति निहित है।

मुख्य शब्द – उत्तरसीताचरितम्, महाकाव्य, भारतीय, संस्कृति, भारतीय, विश्व।

संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति 'सम्' उपसर्ग 'कृ' धातु 'क्तिन्' प्रत्यय से हुई है। जिसका अर्थ है परिष्कार करना, व्यवस्थित करना, पूर्णता प्रदान करना है यह एक मनोक्रिया है। आँग्ल भाषा में संस्कृति को कल्चर (Culture) शब्द से सम्बोधित किया गया है। मूल रूप से संस्कृति शब्द का आशय मानवीय क्रियाओं से हैं जो विचार, ज्ञान, भावना, प्रथाओं, संस्कारों का समन्वित रूप है, किसी भी देश या राष्ट्र की आत्मा उसकी संस्कृति होती है जो उसके अस्तित्व को बनाकर रखती है। क्रोंचे के मतानुसार भारतीय संस्कृति सदियों से संचित भावात्मक मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक उपलब्धि है।[1]

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

पाश्चात्य विद्वानों का मानना है कि ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, विचार विधि और रीति आदि संस्कृति है।

संस्कृति साहित्य समाज का दर्पण है। इस सन्दर्भ में सनातन कवि रेवा प्रसाद द्विवेदी द्वारा विरचित उत्तरसीताचरितम् महाकाव्य में सामाजिक व्यवस्था एवं संस्कृति के विविध स्वरूपों का उद्घाटित किया गया है।

द्विवेदी जी अपने ग्रंथ में सच्चरित की बात पग–पग पर करते है जिसमें राष्ट्र का गौरव निहित है माता कौशल्या अपनी पुत्रवधू सीता के आदर्श आचरण को राष्ट्र का गौरव मानती है जो भारतीय संस्कृति का प्रतीक है–

त्वयोन्नतं दाशरथं शिरोऽद्य तत्, त्वया प्रकाशोऽन्वय एष भास्वतः।
त्वयाऽस्ति पूता ननु मानवी मही त्वया सगर्वं खलु राष्ट्रमस्ति नः।।[2]

कौशल्या अपने दोनों पुत्रों राम और लक्ष्मण से कहती है तुम्हारे ये चीर और जटाएं समर्पण बुद्धि और स्वार्थबुद्धि के लिए युगों–युगों तक राष्ट्र का प्रतीक रहेंगी–

इयं जटा चीरमिदं च वां सुतौकुलस्य देशस्य च नः प्रतीकताम्।
समर्पण स्वार्थधियो रणस्थले गते युगेभ्योऽत्र वसुन्धरातले।।[3]

उत्तरसीताचरितम् में निहित सांस्कृतिक तत्व धर्म है जहां प्रत्येक व्यक्ति चारों वर्णों तथा आश्रमों की व्यवस्था के अनुसार कार्य करते हैं–

चतुर्षु वर्णेषु तथाश्रमेषु स स्थितिं व्यधात् किं च तथाविधां प्रभुः।
यथाऽस्य कृत्स्नापि वशंवदायितं बभार धर्मादियुमर्थसंहतिः।।[4]

यही नही शिक्षा भी वर्ण के अनुकुल दी जाती थी, महर्षि वाल्मीकि ने कुश एवं लव को क्षत्रिय वर्ण के अनुकूल एवं आदर्श शिष्य के रूप में शिक्षा प्रदान किया–

एवं सीता, सुतौ तस्याः, स चापि गुरुरेतयोः।
अन्वार्थयन् निजैर्धर्मैराश्रमत्रि यं निजम्।।[5]

महाकाव्य के प्रथम सर्ग में राजपुत्रों का क्षौर कर्म का वर्णन किया गया है। राम और लक्ष्मण जब अयोध्या वापस लौटते है तो उनके वल्कल वस्त्रों के स्थान पर राजकीय वस्त्र को धारण कराया गया है और नगर में गज, अश्व, वाद्य के द्वारा नगर प्रदक्षिणा कराने की परम्परा थी–

प्रक्लृप्तकेशा अपनीतवल्कला नरेन्द्रनेपूथ्यसमेधितश्रियः।
नृपात्मजास्ते प्रचकाशिरे यथा समग्रभूषा मधुकल्पपादपाः।।
बभूव यस्यां जनतामनः सखी प्रसूनवृष्टिर्मधुराग–निर्भरा।

द्विरेफमालासचिवाऽक्षिसन्ततिस्तथा पिशंगद्युतिरश्रुमण्डिता।।6

मांगलिक कार्य शुभ और अशुभ दिन और समय को देखकर ही सम्पन्न कराये जाते थे राम का राज्याभिषेक वशिष्ट के द्वारा शुभ घड़ी में ही सम्पन्न कराया गया–

शुभा घटीयं शुभ एष वासरो फलान्वितं कृच्छ्रतमं च नस्तपः।
यदार्यधर्मे नितरां शुभाशया स्थितिः समेषां भवतां विभाव्यते।।7

भारतीय संस्कृति को ध्वंस होने से बचाने के लिए समाज में नय की योजना बनायी जाती है और उसके लिए साम, दान, भेद और दण्ड को अपनाया जाता है। इस प्रकार यह सृष्टि कामधेनु के चार पैरों के समान है–

नयस्तदर्थ किल दान सामनी सभेददण्डे समुपास्य योज्यते।
पदेषु तेस्वेव हि सृष्टिरूपिणी प्रवृत्तिशीला सुरभिः प्रवर्त्तते।।[8]

सामाजिक संस्कृति, को 'नय' रूपी अंकुश से रोकने के कारण आज भारतीय संस्कृति विद्यमान है जो व्यक्तियों को अंधकार से निकालकर प्रकाश के मार्ग पर अग्रसर कर लोगों को जागरूक करती है वह द्रष्टा का तृतीय नेत्र है–

नयांकशेनैव, समाज–संस्कृतिः प्रतिक्षणं ध्वंसयमस्य दंष्ट्रिकाम्
विविक्षुरेषा, विनिवार्यते यतो बिभर्त्ति सत्तामधुनापि शोभनाम्।।
नयः स दीपस्तमसि स्थिताअज्ञान् प्रकाशमार्गे परिचालयेत यः।
तृतीयमुद्भासिततथ्यमान्तरं स एव नेत्रं सततं प्रबोधभाक्।।[9]

समाज दोहद स्त्री की मनमोकामना को पूर्ण एवं प्रसन्न करने की परम्परा थी महाकाव्य के द्वितीय सर्ग मे राम गर्भ से व्यथित विदेहनन्दिनी सीता का मनबहलात करते हुए दृष्टव्य होते है–

अथैकदार्यः कृतदोहदव्यथां विनोदयिष्यन् स विदेहनन्दिनीम्
विमानश्रृंगाद् भगवाञ्छ्रियः पतिर्यथैक्षत ब्रह्मसर समुद्भवाम्।[10]

आश्रम में आश्रमवासियों के द्वारा अतिथि सत्कार मंगलोपचार के द्वारा किये जाने की परम्परा थी सीता अपने दोनों पुत्रों को लेकर महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में आती है तो उनका अतिथि सत्कार बड़े ही विधि विधान पूर्वक किया जाता है–

मुनिजनवनिताभिरार्यधर्मे दृष्मतिभिस्तपीस स्थिराभिरेषा।
तनयमिथुनशोभिता परार्ध्यैरूपकरणैः सदकारि तत्र हर्षात्।।
ऋषिजनकृतमंगलोपचारामुटजकुटीमुपलभ्य तत्प्रदिष्टाम्।

इति मनसि चकार दिव्यभावा नरपति सौख्य तृणेषु सा वितृष्णा।।[11]

कवि वाल्मीकि के द्वारा कुश और लव का द्विजोचित संस्कार का वर्णन प्राप्त होता है–

कविरभजतनैतयोरतोऽणुप्रतिममपि द्विजसंस्कृतौ न खेदम्।
भवति ननु कियान् स्वयंप्रभस्य श्रम इहं संस्करणे मणिव्रजस्य।[12]

स्नानादि संस्कारों का वर्णन किया गया जिसके द्वारा सीता दिन प्रतिदिन नए–नए स्नानादि संस्कारों से अपने पुत्रों को परिपुष्ट किया करती थी–

निमि–रवि–कुल–लज्जयेति हर्षात् सुतयुगली विपिनेऽपि रक्तयेव। प्रतिनव–परिकर्म–संविधाभिः
प्रतिदिनमंगसमृद्धिमाप्यते स्म।।[13]

आर्यदेश की मूल विद्या योग विद्या है जो हमारी संस्कृति का मूल आधार है सीता महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में इसी योग विद्या को अभ्यास करती थी–

निजवपुषि निजप्रभुत्वमेषाऽऽसननियमादिभिरार्यदेशजाता।
कथमिवन दधातु, संस्कृतिः स्वाभवति हि किं कथमप्युदस्तवृत्तिः।[14]

कवि वाल्मीकि ने कुश और लव को सभी विद्याओं में निपुण देख कर उनका समावर्तन संस्कार बड़े ही विधि विधान से करके उनको रामायण कष्टस्थ करा दिया–

सांगषु सर्वशास्त्रेषु भावितौ वीक्ष्य तौ कविः।
समावर्तनसंस्कारहेतोः काव्यं निजं जगौ।।[15]

उत्तरसीताचरितम् महाकाव्य में स्त्रियां सभी कार्यों में निपुण थी सीता शिक्षित एवं राजमहिषी होते हुये भी वह गृह कार्य, कृषि कार्य, शिलप्कला, योग, विद्या आदि, कलाओं में निपुण थी–

सीता धान के खेतों में दोनों पुत्रों के साथ जाती थी और स्वयं निराई करती थी साथ ही साथ चटाई, वस्त्र और बर्तन बनाने का कार्य करती और आश्रमवासियों के बच्चों के लिए खिलौने भी बनाती थी–

किसलयशिशुसोदरेण सीता कलमभुवः परिमृद् नतीकरेण।
कठिन–कर–कृतां स्वभूमिसेवां कृषकजनस्य सुदूरमत्यशते।।
स्वयमकृत कटं घटं घटं सा स्वयमसृजल्लघुपुत्तलॉश्च साध्वी।
दिनकर–कुल–वर्धनौ ततस्तौ शिशुवयसावपि कर्मठावकार्षित्।।[16]

इस प्रकार उत्तरसीताचरितम् महाकाव्य में प्रयुक्त सभी पात्रों के क्रिया कलाप भारतीय संस्कृति के आधार है। यह भारतीयों के जीवन और संस्कृति के आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते है। संस्कृति व्यक्तिगत सम्पत्ति न होकर समाज या राष्ट्र की निधि है। विश्व का हित, विश्व की उन्नति का मूल संस्कृति है जिससे सभी प्रकार से राष्ट्र और विश्व की समुन्नति आश्रित है। भारतीय संस्कृति का वैशिष्ट्य, धर्मप्राधान्य आध्यात्मिकी और पारलौकिक भावना सदाचार पालन, वर्णव्यवस्था और आश्रम व्यवस्था कर्मवाद व पुनर्जन्मवाद, मोक्ष, श्रुतिप्रमाण, यज्ञ महत्व, सत्यपरिपालन, अहिंसापालन, त्याग, तपोमयजीवन और मातृपितृ गुरूभक्ति आदि में राष्ट्र और विश्व की समुन्नति निहित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सौन्दर्यबोध एवं ललित कलायें पृष्ठ सं0 105
2. उत्तरसीताचरितम् 1/20
3. वही, 1/22
4. वही, 2/7
5. वही, 8/5
6. वही, 1/41–43
7. वही, 1/49
8. वही, 1/51
9. वही, 1/52–53
10. वही, 2/8
11. वही, 6/8–9
12. वही, 6/26
13. वही, 6/51
14. वही, 6/45
15. वही, 8/4
16. वही, 6/36–38